जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, बड़कोट (उत्तरकाशी)

शीर्षक– उत्तराखण्ड के प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में स्थानीय भाषाओं के समावेशन हेतु प्रधानाध्यापक का नेतृत्व।

निर्देशन– श्री जितेन्द्र सक्सेना,

प्राचार्य, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान बड़कोट,

लेखक मण्डल

श्री शान्ति रतूड़ी, प्रवक्ता डायट बड़कोट, उत्तरकाशी।

श्री अरविन्द सिंह चौहान, प्रवक्ता डायट बड़कोट, उत्तरकाशी।

श्री गुरूदेव रावत, स.अ. रा.उ.मा.वि. स्यालब, उत्तरकाशी।

सहयोग

श्री अनूप बडोला, सदस्य अजीम प्रेमजी फाउन्डेशन, देहरादून।

श्री संजय भट्ट, सदस्य अजीम प्रेमजी फाउन्डेशन, बड़कोट।

जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, बड़कोट (उत्तरकाशी)

माड्यूल संख्या–01

शीर्षक– उत्तराखण्ड के प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में स्थानीय भाषाओं के समावेशन हेतु प्रधानाध्यापक का नेतृत्व।

क्षेत्र – शिक्षण अधिगम प्रक्रिया का रूपान्तरण।

उद्देश्य–

1. उत्तराखण्ड में बोली जाने वाली विभिन्न स्थानीय बोली/भाषाओं का मानक भाषाओं (हिन्दी, अंग्रेजी) को सीखने हेतु समावेशन की प्रक्रिया में आने वाली चुनौतियों की पहचान करना।

2. अधिगम प्रक्रिया में स्थानीय बोली भाषा का उपयोग करते हुये मानक भाषाओं की समझ विकसित करने के लिए प्रधानाध्यापक को नेतृत्व प्रदान करना।

की–वर्ड– स्थानीय भाषागत विविधतायें, मानक भाषाओं के साथ समावेशन की प्रक्रिया, सामुदायिक सहभागिता , शिक्षक एवं छात्रों की भूमिका व स्थानीय संसाधन।

प्रस्तावना– बच्चे अपने साथ बहुत कुछ लेकर विद्यालय आते हैं–अपनी भाषा, अपने अनुभव और दुनिया को देखने का अपना नजरिया आदि। बच्चे घर परिवार एवं परिवेश से जिन अनुभवों को लेकर विद्यालय आते है वे बहुत समृद्ध होते है पहली बार विद्यालय में आने वाला बच्चा अपने शब्दों के अर्थ और उनके प्रभाव से परिचित होता है। विद्यालय में आने पर बच्चे प्रायः स्वयं को बेझिझक अभिव्यक्त करने में असमर्थ पाते है, क्योंकि जिस भाषा में वे सहज रूप से अपनी राय, अपने अनुभव, भावनायें आदि व्यक्त करना चाहते है वह विद्यालय में प्रायः स्वीकृत नहीं होती, भाषा शिक्षण को बहुभाषी सन्दर्भ में रखकर देखने की आवश्यक्ता है। कक्षा में बच्चे अलग–अलग भाषायी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते है कक्षा में इनकी भाषाओं का स्वागत किया जाना चाहिए क्योंकि बच्चों की भाषा को नकारने का अर्थ है उनकी अस्मिता को नकारना। प्राथमिक स्तर पर भाषा सीखने–सीखाने के सम्बन्ध में यह एक जरूरी बात है कि बच्चे विभिन्न प्रकार के परिचित और अपरिचित सन्दर्भो के अनुसार भाषा का सही उपयोग कर सकें। जब बच्चों को अपनी भाषा, अपनी कल्पना, अपनी दृष्टि से लिखने की आजादी मिलेगी तभी बच्चों की भाषायी विकास में सार्थकता सिद्ध होगी। बच्चों को ऐसे अवसर मिलें कि वे अपनी भाषा और शैली विकसित कर सकें न कि ब्लैकबोर्ड, किताबों या फिर शिक्षक के लिखे हुये की नकल करते रहे। पढना लिखना सीखने का एक मात्र उद्देश्य है यह नही है कि बच्चे अपनी पाठ्यपुस्तक को पढना सीख जायें और अपनी पाठ्य पुस्तक में आये विभिन्न पाठों के अन्त में दिये गये प्रश्नों के उत्तर लिख सकें बल्कि इसका उद्देश्य यह है कि वे अपनी

रोजमर्रा की जिन्दगी में पढने लिखने का इस्तेमाल कर सकें। बच्चों की भाषा इस बात का प्रमाण है कि वे अपनी भाषा का व्याकरण अच्छी तरह जानते है पर व्याकरण की सचेत समझ बनाने के लिये आवश्यक है कि बच्चों को उसके विभिन्न पहलुओं की पहचान विविध पाठों के सन्दर्भ में और आस–पास के परिवेश से जोड़कर करायी जाए, भाषा के अलग–अलग तरह के प्रयोगों की ओर उनका ध्यान दिलाया जाय ताकि वे भाषा की बारीकियों को पकड़ सकें और अपनी भाषा में उनका उचित रूप से प्रयोग कर सकें।

गांधी जी की बुनियादी शिक्षा में शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा की पुरजोर सिफारिश की गयी है। गांधी जी के अनुसार " **मनुष्य के मानसिक विकास के लिये मातृभाषा उतनी ही आवश्यक है जितना कि बच्चे के शारिरिक विकास के लिए माता का दूध। बालक पहला पाठ अपनी माता से ही पढता है इसलिए उसके मानसिक विकास के लिए उसके ऊपर मातृभाषा के अतिरिक्त कोई दूसरी भाषा लादना मैं मातृभूमि के विरूद्ध पाप समझता हूं"।** गांधी जी मातृभाषा के सन्दर्भ में कहते है कि इतिहास हमें बताता है कि किसी देश की संस्कृति का विनाश करने के लिए उसके साहित्य का विनाश किया जाता है, इसी सिद्धान्त का अनुसरण कर अंग्रेजों ने हमारे देश में अंग्रेजी को शिक्षा का माध्यम बनाया। इसी कारण बुनियादी शिक्षा में अंग्रेजी को कोई स्थान नहीं दिया गया। आजादी के पश्चात् देश में शिक्षा सम्बन्धित जितने भी आयोग एवं नीतियां अस्तित्व में आयी सभी ने शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में मातृभाषा के महत्व को स्वीकारा है। शिक्षा आयोग (1964–66) कोठारी कमीशन में निम्न प्राथमिक स्तर(1 से 5 तक) हेतु पाठ्यक्रम में प्रथम विषय के रूप में मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा की संस्तुती की गयी है साथ ही निर्देशित किया है कि निम्न प्राथमिक स्तर पर छात्रों को साधारणतः एक भाषा का अध्ययन करना चाहिए यह भाषा उसकी मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा/प्रादेशिक भाषा होनी चाहिए। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या 2005 के अनुसार ज्ञान के सृजन एवं पुनः सृजन के लिए अनुभव के आधार, भाषायी क्षमताओं एवं प्राकृतिक संसार और दूसरे लोगों के साथ अन्तः क्रिया की आवश्यकता होती है। स्कूल में पहली बार प्रवेश करते समय बच्चा संसार के ज्ञान का सृजन शुरू कर चुका होता है हर चीज जो बच्चे बाद में सीखते हैं वह उस ज्ञान से सम्बन्धित होता है जो वह स्कूल में लेकर आता है। सीखने के शुरूआती स्तर पर स्कूल पूर्व से प्राथमिक स्कूली वर्षो में पाठ्यचर्या की सभी गतिविधियों में स्थानीय भाषा को महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए। जब बच्चे स्कूल आते हैं तो उनमें अपनी भाषा या कई मामलों में अनेक भाषाओं में संवाद करने की क्षमता पूर्णतः विकसित होती है वे केवल हजारों शब्दों के साथ स्कूल नहीं आते हैं बल्कि भाषा की जटिल और समृद्ध संरचनाओं के नियम जैसे ध्वनि, शब्द, वाक्य और संवाद के स्तर पर भी उनका पूर्ण नियन्त्रण होता है। एक बच्चा न केवल सही सही समझना और बोलना जानता है बल्कि वह अपनी भाषा का उचित प्रयोग भी करता है। प्राथमिक स्तर पर बच्चों की भाषा को बिना सुधारे उसी रूप में स्वीकार करना चाहिए जिस रूप में वे होती है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के पैरा. 4.11 के अनुसार यह सर्वविदित है कि छोटे बच्चे अपने घर की भाषा/मातृभाषा में सार्थक अवधारणाओं को अधिक तेजी से सीखते हैं और समझ लेते हैं, अतः न्यूनतम प्राथमिक कक्षाओं हेतु शिक्षा का माध्यम घर की भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा/क्षेत्रीय भाषा होगी। साथ ही सभी विषयों में उच्चतर गुणवत्ता वाली पाठ्यपुस्तकों को घरेलु भाषाओं/मातृभाषा में उपलब्ध कराया जायेगा। पैरा. 4.12 में वर्णित है कि अनुसंधान स्पष्ट रूप से दिखाते है कि बच्चे दो से आठ वर्ष की आयु के बीच बहुत जल्दी भाषा सीखते है और बहुभाषिकता से इस उम्र के विधार्थियों को बहुत अधिक संज्ञानात्मक लाभ होता है। पैरा 4.15 में वर्णित है कि दुनियाभर के कई विकसित देशों में यह देखने को मिलता है कि अपनी भाषा, संस्कृति और परम्पराओं में शिक्षित होना कोई बाधा नहीं है, बल्कि वास्तव में शैक्षिक, सामाजिक और तकनीकी प्रगति के लिए इसका बहुत बड़ा लाभ ही होता है।

video link https://youtu.be/XAY6SQyvFXw

विडियो आधारित प्रश्न–

- यदि आपके विद्यालय में भी इस प्रकार की भाषागत विविधता हो तो आपके अनुसार विद्यालय में कौन कौन सी समस्यायें हो सकती है?

  .....

  .....

- आपके विचार से भाषागत विविधता समस्या है या अवसर ? है तो क्यों ?

  .....

  .....

उत्तराखण्ड राज्य बोली भाषाओं की दृष्टि से एक समृद्ध राज्य है यहां विभिन्न जनपदों में विभिन्न बोली भाषाओं के लोग निवासरत् है। कुमांऊ मण्डल के नैनीताल, अल्मोडा. पिथौरागढ, बागेश्वर, चम्पावत एवं उधमसिंह नगर में मुख्यतः कुमांऊनी भाषा बोली जाती है। इसके अतिरिक्त पिथौरागढ के मुनस्यारी विकासखण्ड में जोहारी, धारचुला तहसील की दारमा, व्यास एवं चौन्दास पट्टियों में रडल्वू, तथा विकासखण्ड धारचुला में राजी बोली/भाषायें बोली जाती है। जनपद उधमसिंह नगर के तराई क्षेत्र खटीमा और सितार गंज में थारू तथा विकासखण्ड बाजपुर, काशीपुर में बोक्सा बोली/भाषायें बोली जाती है। उत्तराखण्ड के गढवाल मण्डल के उत्तरकाशी, टिहरी, पौड़ी, चमोली, रूद्रप्रयाग एवं देहरादून में मुख्यतः गढवाली भाषा बोली जाती है। इसके अतिरिक्त जनपद चमोली के विकासखण्ड जोशीमठ के

अन्तर्गत नीति–माणा घाटियों तथा दशोली विकासखण्ड में जहां मार्छा–तोल्छा जनजाति के लोग निवासरत् है वहां पर मारछा–तोल्छा भाषा/बोली कही जाती है। जनपद टिहरी के अन्तर्गत जौनपुर विकासखण्ड के दसजुला, पालीगाड, सिलवाड, इडवाल्स्यू, लालूर, छजुला, सकलाना पट्टियों में जौनपुरी भाषा बोली जाती है। जनपद देहरादून के चकराता और कालसी विकासखण्डों के 39 खतों (पट्टियों) के 413 गांवों में मूलतः जौनसारी भाषा का प्रयोग किया जाता है। जनपद उत्तरकाशी के अन्तर्गत यमुना घाटी के विकासखण्ड नौगांव एवं पुरोला (रंवाई क्षेत्र) में रवांल्टी, विकासखण्ड मोरी की तीन पट्टियों– मासमोर, पिंगल और कोठीगाड) में मुख्यतः बंगाणी भाषा बोली जाती है। उत्तरकाशी की गंगा घाटी के विकासखण्ड भटवाडी एवं डुण्डा के जान्दोंग, निलांग बगोरी, हर्षिल, धराली, भटवाड़ी में जाड़ भाषा बोली जाती है। ऐसे में पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक कक्षाओं में सीधे मानक भाषाओं के प्रयोग से बच्चों को विद्यालय के साथ तालमेल एवं सीखने सिखाने की प्रक्रिया में कृत्रिमता आती है जो कि सहज विकास के लिए न्यायसंगत नहीं है।

यूनेस्को (UNESCO) द्वारा सन् 1953 से ही मातृभाषाओं की महत्ता को वर्णित करते हुये इसे प्राथमिक कक्षाओं में प्रयोग हेतु प्रोत्साहित किया गया। kosonen-2005 के शोध पत्र Education in local launguages: policy and practice in South East Asia . First languages first: community-Based literacy programme for minority languages में कहा गया है कि मातृभाषा के प्रयोग के कारण विद्यालयों में बच्चों के नामांकन तथा बच्चों की सीखन सिखाने की प्रक्रिया में अपेक्षित परिणाम प्राप्त होते है। Benson-2002 अपने शोधपत्र Real and Potential benefits of Bilingual Programme in Developing countries. में अंकित किया गया है कि मातृभाषा में अभिभावक बच्चों के सीखने सिखाने की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाते है तथा शिक्षकों के साथ बेहतर संवाद स्थापित करते है।

Dr Dipti B. Kundal ने अपने शोध पत्र Importance of Mother Language में मातृभाषा की महत्ता को इंगित करते हुये लिखा है कि

1. एक बच्चे की अपने आस पास की दुनिया की पहली समझ, अवधारणाओं और कौशल की शिक्षा और अस्तित्व की उसकी धारणा, उस भाषा से शुरू होती है जो उसे सबसे पहले सिखायी जाती है –वह उसकी मातृभाषा है।

2.व्यक्ति के निर्माण में मातृभाषा का बहुत शक्तिशाली प्रभाव होता है।

3 मातृभाषा हमारी सोच, भावनाओं और आध्यात्मिक दुनिया को तैयार करने में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाती है क्योंकि हमारे जीवन का सबसे महत्वपूर्ण चरण **बचपन** इसकी छाया में बीता हैं।

4 जब कोई व्यक्ति अपनी मातृभाषा बोलता है तो हृदय,मस्तिष्क और जीभ के बीच सीधा संबन्ध स्थापित हो जाता है।

5 मातृभाषा अन्य भाषाओं को सीखने का आधार प्रदान करती है।

6 मातृभाषा बच्चे को उस समाज की संस्कृति से जोड़ती है जिससे बच्चा आता है और उसकी पहचान को आकार देता है।

7 बच्चों की साक्षरता, ज्ञान और क्षमताएं मातृभाषा से उस भाषा में स्थानांतरित होती हैं जो बच्चा स्कूल में सीख रहा है।

एक अध्यापक के रूप में हमें समझना चाहिए कि यदि हमारे विद्यालयों में आने वाले छात्रों का मानक भाषाओं (हिन्दी/अंग्रेजी) से कोई परिचय नहीं है तो यह कोई समस्या नहीं है अपितु एक अवसर है जिसमें हम बच्चे की क्षेत्रीय भाषा की समझ को उसके भाषायी विकास में सहायक के रूप में प्रयुक्त कर अपने शिक्षण कौशलों का परिमार्जन कर सकते है। साथ ही हमें बच्चे के प्रति भी संवेदनशील होने की आवश्यकता है क्योंकि बच्चें अपने घर में जिस भाषा में अब तक संवाद कर रहे हैं और जो भाषा (हिन्दी/अंग्रेजी) विद्यालय में प्रयुक्त हो रही है उन दोनों में बड़ा अन्तर है । शुरूआती दिनों में यह समस्या बच्चे के दृष्टिकोण से बड़ी भयावह हो सकती है, बच्चे की पढने में अरूचि हो सकती है और परिणाम शालात्याग के रूप में भी हो सक ्ते है।इसलिए यह आवश्यक है कि इस हेतु बेहतर रणनीतियां तैयार की जाएं एवं बहुभाषिकता का सम्मान तथा उपयोग करते हुये विद्यालयों में अनुकूल अधिगम परिस्थितियां निर्मित की जाय।

उत्तराखण्ड के परिप्रेक्ष्य में भाषायी चुनौतियां एवं इसके कारण– उत्तराखण्ड में एकल जनपद में भी कई बोली/भाषाओं के लोग निवासरत् है ऐसे में सम्पूर्ण राज्य में भाषागत विविधता को यहां सामान्यतः समझा जा सकता है शिक्षा के माध्यम के रूप में उत्तराखण्ड के विद्यालयों में सामान्यतः हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषायें प्रचलित है। ऐसे क्षेत्र जहां पर सम्पूर्ण परिवेश में क्षेत्रीय बोली ही बोली जाती है के बच्चे जब विद्यालय में प्रवेश करतें है तो अध्यापक द्वारा बोली जाने वाली मानक भाषाओं से वे स्वयं का तादात्मय स्थापित नहीं कर पाते फलस्वरूप बच्चे किसी सम्बोध पर जानकारी होने के बावजूद भी अभिव्यक्ति देने से बचना प्रारम्भ कर देते है। विद्यालय में अध्यापक तथा बच्चों में परिवेश की भिन्नता से भी कई बार शब्दों के अर्थ में अन्तर के कारण कई बार विचित्र स्थितियां पैदा हो जाती है ।

उदाहरण– मूलतः टिहरी जनपद (गढवाली भाषा) के एक अध्यापक द्वारा अपना अनुभव साझा करते हुये कहा गया कि जब उनका स्थानान्तरण उत्तरकाशी के रंवाई क्षेत्र के एक विद्यालय में हुआ तो एक बार बच्चों की गृहकार्य का निरीक्षण करने के लिए जब उन्होंने बच्चों से कॉपी दिखाने को कहा तो एक बच्चे ने कॉपी दिखाने में असर्मथता जाहिर की और कारण जानने पर बच्चे ने कहा कि **"गुरूजी भुली मरी"** गुरूजी ने बच्चे को प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हुये उसे बैठने के कहा और अन्य बच्चों के गृह कार्य का निरीक्षण करने लगे। कुछ दिन बाद पुनः गृहकार्य के निरीक्षण के दौरान उन्होंने पाया कि इस बार कक्षा के दो अन्य छात्रों ने गृह कार्य पूर्ण न होने पर कारण के रूप में गुरूजी से कहा कि **"गुरूजी भुली मरी"** इस बार गुरूजी थोड़ा हैरान हुये क्योंकि उन्हें गांव में रहते हुये कुछ वक्त हो गया था। उन्हें कुछ सन्देह हुआ तो उन्होंने विद्यालय की भोजनमाता से इस सन्दर्भ में जानकारी ली तो ज्ञात हुआ कि जिसे गुरू जी भुली मरी (भुली अर्थात् छोटी बहिन और मरि अर्थात् मरना गढवाली बोली में) समझ रहे थे, वह वास्तव में भुली मरि अर्थात भूल जाना रंवाल्टी बोली में है।

ऐसे ही कई उदा. है जो बोलियों में शब्दों के अर्थ की भिन्नता को प्रदर्शित करते है।
आइये देखें– कुछ सामान्य वाक्यों को उत्तराखण्ड के विभिन्न क्षेत्रों में बोली जाने वाली बोलियों में किस प्रकार कहा जाता है **– हिन्दी– मैं विद्यालय जा रहा हूं।**

जौनसारी– आंऊ स्कूलऽके रहा जांदा लागी।
जाड– ऊं स्कूल डव्यें।
गढवाली – मी स्कूल जाणों। **कुमांउनी**– मी स्कूल जानिन।
बंगाणी– आंव स्कूल डेंऊ। **रंवाल्टी**– मी स्कूल नणी।

हिन्दी– कोई बच्चा शोर नहीं करेगा।

जौनसारी– कुण्या हाल्ला नु करिया। **जाड–** सु भी पिरिंग ग्यालू मिभेदनो।
गढवाली –क्वी छोरा हल्ला नि मचालू।**कुमांउनी**–कोई नानतिन हल्ल नी करोल
बंगाणी– कोई भी पेटारे हाल्लो न मचाईओ।
रंवाल्टी– कोई भी निन्याव घ्यालू न मचालू।

हिन्दी– क्या तुम आज नहाये नहीं।

जौनसारी– तू ऐला नाउणा ना। **जाड–** खूं टिरिंग झुगू मा मांदुमा
गढवाली – तुम आज नहे नि छां रे। **कुमांउनी**–तुमुल आज नाई ने के।
बंगाणी– ऐतरा नहाऊऐ ना तुम्में **रंवाल्टी–** तु ऐतरा न्वयणु ना।

बच्चे सामान्यतः विद्यालय में बोली जाने वाली भाषाओं को घर पर प्रयोग नहीं करते है और भाषा सीखने की पहली शर्त ही यही है कि भाषा को सीखने के लिए उस भाषा के सम्पर्क मे रहना अति आवश्यक है यहां तक की आमतौर पर यह देखने में आता है कि बच्चे विद्यालय में भी अपने साथियों के साथ मानक भाषा का प्रयोग न कर क्षेत्रीय/स्थानीय बोली/भाषाओं का ही प्रयोग कर रहे होते है ऐसे में यदि बच्चों को उनकी क्षेत्रीय भाषा /स्थानीय भाषा की अनदेखी कर मानक भाषाओं को उन पर थोपने के प्रयास करते हैं तो उनके मन में अपनी भाषाओं के प्रति हीनता का भाव अथवा मानक भाषाओं के प्रति अलगाव पैदा कर सकते है। बच्चें के मन में प्रश्न उठने लगते हैं कि जन्म से लेकर अब तक जो भी उन्होनें सीखा वह सही भी था अथवा नही। कई बार वह अपनी सांस्कृतिक विरासत को अपना पिछड़ापन समझने लगते हैं जो कि भविष्य के लिए बहुत ही घातक साबित हो सकता है।

केस स्टडी

उत्तराखण्ड के जनपद उत्तरकाशी की यमुनाघाटी में विकासखण्ड नौगांव के गंगटाडी संकुल में स्थित राजकीय प्राथमिक विद्यालय सरनौल, जनपद मुख्यालय से 130 कि.मी. की दूरी पर अवस्थित है। सरनौल गांव उत्तराखण्ड के मुख्य पर्यटक स्थल सरूताल के मुख्य पडाव पर स्थित है, यहां से सरूताल की पैदल यात्रा प्रारम्भ होती है। यहां से सरूताल की पैदल दूरी लगभग 38 कि.मी. है। सरनौल निवासियों की आजीविका का मुख्य साधन कृषि एवं पशुपालन है यहां सीमित क्षेत्र में ही 4 राजकीय प्राथमिक विद्यालय (रा.प्रा.वि.सरनौल, रा.प्रा.वि. गडाल गावं, रा.प्रा.वि. बूटाधार, एवं रा.प्रा.वि. चपटाड़ी स्थित है। इस क्षेत्र में मुख्य भाषा रंवाल्टी है। यहां पर कृषि कार्य करने वाले बहुत से नेपाली परिवार भी है अतः विद्यालय में नेपाली मूल के बच्चे भी अध्ययनरत है। जिस कारण विद्यालय में भाषागत विविधता स्पष्ट रूप से दिखायी देती है ।

श्री धीरज त्यागी, प्रभारी प्रधानाध्यापक राजकीय प्राथमिक विद्यालय जो मूलतः हरिद्वार जनपद के निवासी है ने अपने शैक्षिक अनुभवों को डायट बड़कोट उत्तरकाशी के संकाय सदस्यों के साथ साझा करते हुये बताया कि उनकी प्रथम नियुक्ति अक्टूबर 2014 में जब इस विद्यालय में हुयी तो उन्हें बच्चों तथा उनके अभिभावकों के साथ भाषा को समझने के स्तर पर बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। क्योंकि बच्चों एवं अभिभावकों की भाषा को उन्होनें जीवन में पहली बार सुना था, वे कहते है कि मैं गढवाली भाषा से तो कुछ–कुछ परिचित था किन्तु ये भाषा(रंवाल्टी) उससे एकदम भिन्न थी। पहली बार कक्षा में गया तो कक्षा एक दो के बच्चे मुझे बडी हैरानी से देख रहे थे क्योंकि न वे मुझे कुछ समझा पा रहे थे और न ही वे मेरी भाषा समझ पा रहे थे। और दूसरी कक्षा में दूसरे गुरूजी (जो यहीं के स्थायी निवासी भी है) बच्चों के साथ उन्हीं की भाषा में बात करते हुये बडे मजे से शिक्षण कार्य का आनन्द ले रहे थे अब समझ नही आ रहा था कि ऐसे में शिक्षण कार्य कैसे सम्भव हो पायेगा ? इसके पश्चात् मैनें विद्यालय के शिक्षक साथी दिनेश सेमवाल जी से समस्या के बारे में बात की कि जिस भाषा को मैं थोडा भी समझ नहीं पा रहा हूं आखिर उस भाषा के बच्चों के साथ मैं कैसें संवाद स्थापित कर सकता हूं। दिनेश सेमवाल जी ने सुझाया कि आप धैर्य न खोयें धीरे–धीरे सब ठीक हो जायेगा। मैं कई दिनों तक सोचता रहा कि आखिर ऐसे में शिक्षण होगा कैसे ? इसके लिए सर्वप्रथम मैंने विद्यालय में प्रयुक्त होने वाले सामान्य बोल चाल के शब्दों/वाक्यों को बच्चों की मातृभाषा (रंवाल्टी) से देवनागरी लीपि में अपनी डायरी में लिखना शुरू किया और प्रत्येक दिन एक या दो नये शब्दों को अपनी भाषा में शामिल करने लगा, अचानक मैंने पाया कि अब बच्चे मेरे साथ भी धीरे–धीरे सहज हो रहे थे। इसके पश्चात हमनें विद्यालय स्तर पर बच्चों और साथी अध्यापक के सहयोग से कुछ पन्नों का शब्दकोश विकसित किया जिसमें हमने रंवाल्टी, नेपाली को हिन्दी एवं हिन्दी को रंवाल्टी, नेपाली के शब्दों में लिखने की कोशिश की। ऐसा करने से बच्चों में एक अलग तरह का आत्म विश्वास देखने को मिला जिसमें वे मुझे अपनी भाषा सिखाने के लिए बडें उत्साहित दिखाई दिये साथ ही इसके कारण उनकी हिन्दी भाषा में भी बेहतर समझ विकसित होने लगी। मैनें महसूस किया कि जब बच्चों को बच्चा न समझकर उन्हें उनके अनुभवों के एक जानकार के रूप में प्रस्तुत होने का अवसर मिलता है तो बच्चे की अभिव्यक्ति तथा उसका सीखना और निखर के सामने आता है।

Video link-https://youtu.be/dKDK44-h9Xg

चर्चा प्रश्न–

प्रधानाध्यापक के रूप में आप उत्तराखण्ड के किसी दूरस्थ क्षेत्र के विद्यालय में हों जहां समुदाय की भाषा से आप अनविज्ञ हों ऐसे में भाषागत शिक्षण हेतु आपकी रणनीति क्या होगी ?

- बच्चों के सन्दर्भ में–.....
- शिक्षकों के सन्दर्भ में–.....
- समुदाय के सन्दर्भ में–.....

स्थानीय भाषाओं के समावेशन हेतु सीखने सिखाने की प्रक्रियाओं में बदलाव हेतु प्रधानाध्यापक की अपेक्षित भूमिका– एन.सी.एफ.2005 के अध्याय 2 –सीखना और ज्ञान के अन्तर्गत 2.2 में उल्लेखित है कि "बच्चों की आवाज व अनुभवों को कक्षा में अभिव्यक्ति नहीं मिलती है । प्रायः केवल शिक्षक का स्वर ही सुनाई देता है बच्चे केवल अध्यापक के सवालों का जवाब देने के लिए ही या अध्यापक के शब्दों को दोहराने के लिये ही बोलते हैं। कक्षा में वे शायद ही कभी स्वयं कुछ करके देख पाते है। उन्हें पहल करने के अवसर भी नहीं मिलते है। किताबी ज्ञान को दोहराने की क्षमता के विकास के बजाय पाठ्यचर्या बच्चों को इतना सक्षम बनाये कि वे अपनी आवाज ढूंढ सकें, अपनी उत्सुकता का पोषण कर सकें , स्वयं करें, सवाल पूछें , जांचे परखें और अपने अनुभवों को स्कूली ज्ञान के साथ जोड़ सके।"

मनौविज्ञानियों का मानना है कि बच्चे उसी वातावरण में बेहतर सीखते है जहां पर उन्हें लगे कि उन्हें महत्वपूर्ण माना जा रहा है। अतः यह जरूरी है कि बच्चे के वृहद अनुभव, शब्द भण्डार और स्थानीय बोली के उसके भाषा ज्ञान को स्वीकार कर उसे अधिगम प्रक्रिया में सहायक सामग्री के रूप में प्रयोग किया जाना चाहिए जिससे बच्चा शिक्षा तथा विद्यालय से बेहतर जुड़ाव महसूस कर सके।

इस हेतु एक प्रधानाध्यापक के रूप में हम निम्नलिखित स्तरों पर कार्य कर सकते है।

(अ) शिक्षकों के स्तर पर –

1. भाषागत समस्याओं की पहचान करना।
2. स्थानीय सन्दर्भदाताओं की पहचान।
3. अधिगम प्रतिफलों के अनुरूप स्थानीय भाषाओं के समावेशन वाली पाठ योजनाओं का निर्माण।

4. मूल्यांकन में स्थानीय भाषाओं को प्रोत्साहन।
5. मानकभाषा–स्थानीय भाषा को समावेशित करने वाली कहानियों, नाटकों, वार्तालाप आदि गतिविधियों का निर्माण

(ब) बच्चों के स्तर पर–

1. मानकभाषा–स्थानीय भाषा शब्दकोष निर्माण में बच्चों का सहयोग।
2. स्थानीय कथा/कहानियों का संकलन एवं उनका मानक भाषा में रूपान्तरण।

(स) समुदाय के स्तर पर–

1.सन्दर्भदाताओं (गांव के ऐसे व्यक्ति जो मानक तथा स्थानीय दोनों भाषाओं की सामान्य समझ रखते हों) की पहचान हेतु सहयोग।
2. मानकभाषा–स्थानीय भाषा शब्दकोष निर्माण में सहयोग।
3. समुदाय की लोक–सांस्कृतिक गतिविधियों (स्थानीय मेले, रामलीलाएं आदि) में स्थानीय भाषाओं के साथ मानक भाषाओं के समावेशन हेतु प्रेरित करना।

(द) विद्यालय स्तर पर–

1. पुस्तकालय में द्विभाषीय पुस्तकों की उपलब्धता एवं प्रयोग
2.समय–समय पर विद्यालय के समस्त अध्यापकों को स्थानीय भाषा के सम्मान एवं उपयोगिता हेतु प्रेरित करना।
3. विद्यालय में दीवारों पर लिखी उक्तियों /निर्देशों में स्थानीय भाषा का समावेशन।
4. शिक्षण सहायक सामग्री में त्रिभाषायी(हिन्दी–अंग्रेजी–स्थानीय भाषा) हस्त पुस्तिकाओं का निर्माण

समेकन– भाषागत विविधता को कई बार लक्षित भाषा को सीखने की राह में एक बाधक के रूप में समझा जाता है यहां तक की कुछ विद्यालयों में भाषा विशेष के अतिरिक्त अन्य भाषाओं के प्रयोग को विद्यालय में वर्जित किया जाता है साथ ही कई बार बच्चों के स्थानीय भाषा में बोलने पर उन पर आर्थिक दण्ड भी लगाये जाते हैं जो पूरी तरह अमनोवैज्ञानिक है। इससे बच्चे अपनी भाषा और संस्कृति को हीनता की दृष्टि से देखने लगते हैं जिस कारण शिक्षा का लक्ष्य ज्ञान प्राप्ति न होकर भाषायी दक्षताओं में ही उलझकर रह जाता है। इसमें कोई दोराय नहीं की यदि बच्चें की प्रथम भाषा/मातृभाषा/स्थानीय भाषा में बच्चें को सीखने के पर्याप्त अवसर दियें जाये तो उसके परिणाम निःसन्देह बहुत ही प्रभावशाली एवं उत्साहवर्धन वाले होंगे। सभी शिक्षा आयोग तथा शैक्षिक नीतियां इसी बात पर बल देती हैं किन्तु अद्यतन भी स्थानीय/क्षेत्रीय भाषाओं में पर्याप्त तथा मानक पुस्तकों का अभाव है , ऐसे में यह मात्र एक आदर्श विचार ही बनकर न रह जाय। एक प्रधानाध्यापक के रूप में हमें स्थानीय भाषाओं को अधिगम प्रक्रिया का सोपान बनाने के मनोवैज्ञानिक लाभों से अवश्य परिचित होना चाहिए साथ ही विद्यालय के अन्य शिक्षकों को भी इस बात के लिए लगातार प्रेरित करना चाहिए कि वे

कभी भी जाने–अनजाने में भाषाओं को श्रेष्ठता के तराजू में न तोलें । बहुभाषावाद को कक्षा में संसाधन के रूप में प्रयुक्त किया जाना चाहिये।

सन्दर्भ सूची–

- kosonen-2005, Education in local launguages: http://www.sciepub.com/reference/all
- Benson-2002,Real and Potential benefits of Bilingual Programme in Developing countries https://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1080/13670050208667764
- भारत में शिक्षा का विकास –गुरूसरन दास त्यागीं।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
- राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005
- Dr Dipti B. Kundal ,Importance of Mother Language.